REVIEW OF RESEARCH
ISSN: 2249-894X
IMPACT FACTOR : 5.7631(UIF)
VOLUME - 11 | ISSUE - 8 | MAY - 2022

कोविड-१९ के परिप्रेक्ष्य में'श्रीमद्भगवतगीता में उपदिष्ट जीवनचर्या की सामयिक उपादेयता'

डॉ. धर्मेन्द्र कुमार
का.प्राचार्य, महामाया राजकीय महाविद्यालय,श्रावस्ती.

संपूर्ण विश्व को मात्राभेद,परिणामभेद आदि से आक्रांत कर,मानव-जीवन को भयाक्रान्त करने वाली 'कोरोना' जिसको हम 'कोविड-१९ महामारी' के नाम से जानते हैं,ने विगत २०१९ से अपना रूपाकार विस्तृत करते हुए २०२० में अपने को 'वैश्विक' बनाकर अपनी प्रभावमयता व भयावहता को स्थापित किया।इसने ना जाने कितने मानवों को असमय ही कालकवलित कर,उन सबके परिवारों पर कितना क्रूर,निष्ठुर अत्याचार किया,इसका अंदाजा या अनुमान लगाना दु:साध्य या असंभव प्रकृति का ही है। कोविड-१९ ने सामान्य जनजीवन हड़बड़ाहट, घबराहट,तनाव,बेचेनी,उलझन,अवसाद,किंकर्तव्यविमूढ़ता,नकारात्मकता आदि प्रतिकूलताओं के संजाल व वातावरण में आबद्ध कर दिया,निबद्ध कर दिया। कोरोना वायरस के पहचान के लिये चिकित्सकों ने, वैज्ञानिकों ने लंबे समय तक आनुमानिक या बहुत हद तक प्राक्काल्पनिक प्रविधियों का आश्रय लेकर इसके समुचित इलाज हेतु प्रयत्नशील हुये परन्तु कोई कारगर व सर्वमान्य निदान निकालने में अक्षम रहे। कोविड-१९ चूंकि संक्रामक बीमारी के रूप में चिह्नित हो चुका था,अतैव व्यक्ति से व्यक्ति का संपर्क अति नजदीकी से न हो,क्योंकि यह छीकनें,खाँसी होने,बुखार होने,सांस लेने में दिक्कत होने से,समीपवर्ती को तत्काल ही प्रभावित कर देती है,अत: दो गज की दूरी,मास्क है जरूरी,जीवन में हो स्वाचार,शुद्ध सात्विक हो,आचार-विचार-आदि नारों,उद्घोषों से लोगों को जागरूक व सचेष्ट किया गया ताकि लोग अपने जीवन को इस रूप में अनुशासित कर लें,संयमित कर लें कि कथमपि भी मानसिक रूप से ,शारीरिक रूप से कमजोर न होकर,व्याधिग्रस्त न हों जायें।

कोरोना जैसी बीमारियों का मुख्य कारण अकस्मात् मानसिक तनाव का वातावरण बनाकर,आन्तरिक हृदय को कमजोर बना लेना है,फलत: अपनी प्रतिरोधक क्षमता का क्षरण कर,रोगकारक जीवाणुओं,विषाणुओं,कृमियों, आदि को मजबूत बनाना है ,उनके मजबूत होते ही हम बीमारियों से मुकाबला करने वाली अपनी अदम्य शक्ति का परित्याग कर बैठते हैं व संक्रमण आदि के शिकार हो जाते हैं। प्राय: व्यवहार में हम देखते हैं कि पंच ज्ञानेन्द्रियों-नाक,कान,त्वचा,जिह्वा व आँख व पंच कर्मेन्द्रियों-हाथ,पैर,मलद्वार,उपस्थ व जननेन्द्रिय-के अतिरिक्त ग्यारहवी इन्द्रिय या उभयात्मक इन्द्रिय मन है,जो वस्तुत: समस्त क्रिया-कलापों का व्यावहारिक आधार है ,वही हमें नाना प्रकार बाँधने वाली क्रियाओं में सहभागी बनाता है ,और जैसी हमारी मानसिक संकल्पना व अवस्थिति होती है ,वैसी ही कर्मरति,चेष्टारति व विविध

गति होती है। जैसा कि नासमझ मानव की गति ही होती है कि वह नकारात्मक विचारों का ही अधिकाधिक प्रवाहक व संवाहक होता है।ऐसी स्थिति में बुद्धि का अनुयायी न होकर मन का दास होकर रह जाता है और थोड़ा सा व्यतिक्रम व उच्चावच होने पर कोरोना जैसी विपदाओं के भँवर जाल में फँस कर बहु तबड़े संकट में पड़ जाता है। इसलिये कहा गया है कि 'मन एव मनुष्याणां कारणं बन्धमोक्षयो: अर्थात् मन ही व्यक्ति के बंधन व मोक्ष का कारण होता है। यह बात सर्वथा सत्याश्रित ही है।

मन ही सांसारिक राग-द्वेष का उत्सर्जन स्थल है।अत: कोरोना जैसी घातक व जानलेवा व्याधि का आविर्भाव ही न हो, अतैव विश्वविशालतम ज्ञानराशि ' महाभारत'की अंशभूता 'विश्व समादृता श्रीमद्भगवद्गीता का आश्रयण सामयिक रूप से उपादेय सिद्ध होगा। आसक्ति का जबतक हमारे या कर्मयोगी द्वारा त्याग नहीं होता तबतक अन्त:करण की शुद्धि नहीं होगी और यही कारण है कि कर्मशील या रत योगी व्यक्ति इन्द्रिय,मन,बुद्धि व शरीरद्वारा,आसक्तिभाव का परित्याग कर केवल अन्त:करण की शुद्धि के लिये कर्म करते हैं-

कायेन मनसा बुद्ध्या केवलैरिन्द्रियैरपि।
योगिन:कर्म कुर्वन्ति सङ्गं त्यक्तात्मशुद्धये।। गी.५-११

आज हमारे अवसाद,बेचैनी आदि से ग्रस्त होने का बहु त बड़ा कारण हमारी सकामता है,फलासक्ति है और जब हम सफल नहीं हो पाते हैं या और कामनायुक्त होते जाते हैं तो सांसारिकता में उलझते जाते हैं फिर हमारी मानसिक व शारीरिक स्थिति बद से बदतर होती जाती है-

युक्त: कर्मफलं त्यक्त्वा शान्तिमाप्नोति नैष्ठिकीम् ।
अयुक्त:कामकारेण फले सक्तो निबध्यते।। गी.५-१२

अंत:करण को वश में करने वाला व सब कर्मों को मन से त्यागकर परमात्मा के स्वरूप में स्थित रहना चाहिये।

आज हमारे अशान्त रहकर,अपने जीवन को संकट में डालने का सबसे बड़ा कारण है, हमारी दृष्टि भेद,जब हमारी बुद्धि भेददृष्टि का त्याग करके समदृष्टि का वरण कर लेगी तो हमारे मानसिक कलुषताओं का अन्त निश्चित है,तभी हम ज्ञानी पण्डित कहलाने के अधिकारी हैं। इसी बात को लक्षित करते हु ए श्रीकृष्ण कहते हैं कि परम ज्ञानी लोग,ज्ञानविद् पण्डित व गौ,हाथी,कुत्ते और चाण्डालों तक में समदर्शी ही होते हैं-

विद्याविनयसम्पन्ने ब्राह्मणे गवि हस्तिनि।
शुनि चैव श्वपाके च पण्डिता: समदर्शिन:।। गी.५-१८

आगे भगवान् कहते हैं कि जिनका मन समभाव में स्थित है,उनके द्वारा जीवित अवस्था में ही संपूर्ण संसार को जीत लिया गया है-

इहैव तैर्जित:सर्गो येषां साम्ये स्थितं मन:।
निर्दोषं हि समं ब्रह्म तस्माद् ब्रह्मणि ते स्थिता:।। गीता५-१९

आज स्वार्थवादिता,लोभ,क्रोध आदि का ऐसा विषाक्त वातावरण बनता जा रहा है कि हमारा जीवन सर्वकल्याणात्मक प्रवृत्तियों से रहित होता जा रहा है जो हमारे दु:ख का बड़ा कारण बनता जा रहा है। आज मानवता ,उदारता,चारित्रिक उत्कृष्टता का पहलू इतना कमजोर होता जा रहा है कि हम छद्म शिकार बन सबको छलने व हिंसित करने की ताक में कुटिल नीति के दुष्प्रेरणा से संपूरित हो जन-जन का विनाश करने के लिये उद्यत हैं,जबकि अप्रत्यक्ष रूप से हम अपना ही विनाश करने के लिये तत्पर हैं। गीता की सर्वभूतहिते रता: की भावना से हमारे विरत होने के कारण ही यह ऊहापोह की स्थिति है,जो कोरोना को सहन करने की हमारी शक्ति को विनष्ट करती जा रही है।

श्रीकृष्ण मन की ताकत को इतनी गंभीरता से समझते हैं कि उसको साधने की बात सतत् करते हैं।

अर्जुन के यह कहने पर कि मन को नियंत्रित करना दुष्कर है।मन को वश में करना वायु के समान दुष्कर है –

चञ्चलं हि मन: कृष्ण प्रमाथि बलवद्दृढ़म् ।
तस्याहं निग्रहं मन्ये वायोरिव सुदुष्करम् ।।गीता.६-३४

अर्जुन के कथन का समर्थन करते हुए श्रीकृष्ण कहते हैं कि नि:सन्देह ऐसा ही है,यह मन चञ्चल व कठिनता से वश में होनेवाला है,परन्तु अभ्यास व वैराग्य से नियंत्रित किया जा सकता है-

अशंसयं महाबाहो मनो दुर्निग्रहं चलम् ।
अभ्यासेन तु कौन्तेय वैराग्येण च गृह्यते।।गी.६-३५

मन का ऐसा सूक्ष्म स्वरूप प्रस्तुत करना अति व्यावहारिक व वैज्ञानिकताश्रित कथन है। यदि हम मन के महत्व को समझ लें तो किसी भी प्रकार की परेशानी से बच सकते हैं,कोरोना क्या चीज है?

इसी बात को पुष्ट करते हुये कहते हैं कि जिसका वशी मन है वही योग जैसी परम उपकारक वस्तु को पा सकता है-

असंयतात्मना योगो दुष्प्राप इति मे मति:।
वश्यात्मना तु यतता शक्योऽवाप्तुमुपायत:।। गीता.६-३६

सर्वसंकल्पों का त्याग करने वाले को ही असली योगी कहते हैं,ऐसा व्यक्ति ही कल्याणगामी होता है, वही योगारूढ़ होता है।

आज हम प्राय: देखते हैं कि तनिक सी विषम स्थिति उत्पन्न होती है कि हमारे हाथ-पांव फूल जाते हैं।ऐसा इसलिये होता है कि समाज का लगभग हर व्यक्ति शोषक की ही भूमिका में हैं,रक्षक की भूमिका में नहीं है,अतैव आशंका हमें घेर लेती है और हम अपने को बेसहारा व अकेला समझने लगते हैं,इसके पीछे की जो सोच है वह है कि हम अपने आत्मतत्व का स्वरूप ही नहीं समझ पाये हैं और हम अपने कल्याण से वंचित हो गये हैं जबकि व्यक्ति का आत्म कल्याण स्वयं उसके हाथों में सन्निहित है,अपना शत्रु व मित्र हम स्वयं ही हैं-

उद्धरेदात्मनात्मानं नात्मानवसादयेत् ।
आत्मैव ह्यात्मनो बन्धुरात्मैव रिपुरात्मन:।। गी.६-५

आज हम विषम वातावरण का निर्माण कर उसमें चतुर्दिक् फँसते जा रहे हैं,परिणामत: हमारी सहिष्णुता न्यूनतर होती जा रही है जो हमारे अस्तित्व के लिये हानिकारक होती जा रही है। इसके निदान का एक कारगर सूत्र बताते हुए श्रीकृष्ण कहते हैं कि सुहृद् (स्वार्थरहित होकर जो सबका हित चिन्तन करे वही सुहृद् है) मित्र,वैरी, उदासीन (पक्षपातरहित) मध्यस्थ(दोनों ओर का कल्याणचिन्तक)द्वेष्य ,बन्धुगणों में, धर्मात्माओं में और पापियों में भी समान भाव रखने वाला अत्यन्त श्रेष्ठ है-

सुहृन्मित्रार्युदासीनमध्यस्थद्वेष्यबन्धुषु।
साधुष्वपि च पापेषु समबुद्धिर्विशिष्यते।। गी.६-९

सर्वसामान्य के लिये सुखमय व भगवद्मय जीवन जीने के लिये बड़ा मार्गदर्शक सिद्धान्त प्रस्तुत करते हुए कहते हैं कि आशामयता का परित्याग व संग्रहरहितता का आश्रय लेते हुए एकान्त स्थल का सेवन करते हुए भगवद् साधना में तल्लीन रहे। गीता.६-१०

मन के संदर्भ में जिस सजगता व वैज्ञानिकता के साथ पथ का निर्देशन करते हैं,वह अपने आप में समस्त मानसिक क्लेशों का निवारक है।व्यक्ति को एकनिष्ठ ,ध्याननिष्ठ करने के लिये योग का अभ्यास व अभ्यास प्रविधि तक बताते हैं,साथ ही प्रशान्तात्मा बनने के क्रम में मन को अपने में लगाने की बात करते हैं-

मन:संयम्य मत्चित्तो युक्त आसीत मत्पर:।। गी.६-१४

श्रीकृष्ण ने योग को दु:खों का नाशक बताया है परन्तु इसके लिये जो विधि बताई है वह परम वैज्ञानिक,तार्किक,व्यावहारिक व लोकोपयोगी है। तीन उपायों का सही अनुपालन व अनुसरण करने वाला व्यक्ति किसी भी प्रकार की बीमारी आदि से ग्रस्त होने की आशंका नहीं होती,तद्यथा-

1- सर्वथोपयुक्त,यथायोग्य आहार-विहार का सेवन।

2- निर्दिष्ट कर्मों में निष्ठापूर्ण प्रवृत्ति व चेष्टा।

3- संयमित शयन व संतुलित समय पर जागरण।

तद्यथा- युक्ताहारविहारस्य युक्तचेष्टस्य कर्मसु।

युक्तस्वप्नावबोधस्य योगो भवति दु:खहा।। गीता.६-१७

आज हम नानाप्रकार की व्याधियों से यदि ग्रस्त हैं तो कहीं न कहीं कर्मों में हमारी संलग्नता स्वाभाविक रूप से न लगने के कारण हैं।हमें प्रतीत होता है कि अनावश्यक रूप से हमको सन्नियोजित किया जा रहा है,यह हमारे मानसिक रुग्णता का बड़ा कारण बनता जा रहा है।आज हमारा खाना-पीना,जागना-सोना,सब अनियमित होता जा रहा है।तकनीकी पर आश्रित होते जा रहे हमारे जीवन को इसका कितना खतरनाक सहप्रभाव पड़ता जा रहा है,इसका अनुमान हमें सद्य: नहीं हो पा रहा है।इस पर गहनता से विचार सामयिक होगा।

आगे श्रीकृष्ण भोजन के बारे में ,मनुष्य की श्रेणी व उसके स्तर से तुलना करते हुये कहते हैं कि सात्विक वृत्ति वाला मनुष्य आयु,बल,बुद्धि तथा आरोग्य,सुख,प्रेम बढ़ाने वाले रसपूर्ण,स्निग्ध अर्थात् घी,दूध-दधि युक्त एवं शरीर को स्थिरता या शक्ति प्रदान करने वाला,हृदय को प्रसन्न करने वाले आहार या भोजन सेवन करते हैं-

आयु: सत्त्वबलारोग्यं सुखप्रीतिविवर्धना:।

रस्या: स्निग्धा: स्थिरा हृया आहारा:सात्त्विकप्रिया:।। गी.१७-८

उत्तम व्यक्तियों के लिये संतुलित भोजन की जो रूपरेखा वैज्ञानिक व आहार विशेषज्ञ,आज बताते हैं,उसको अति पूर्व में कह दिया गया है।

सात्विक व्यक्तियों के बाद राजसिक व्यक्तियों के अर्थात् द्वितीय श्रेणी या मध्यम गति वाले मनुष्यों के दैनिक आहार की चर्चा करते हुये कहते हैं कि -कड़वा,खट्टा,नमकीन तथा अधिक गरम,तीखा,रूखा और पेट में जलन पैदा करने वाला आहार करते हैं,जो दु:ख,शोक तथा रोगादि उत्पन्न कर मनुष्य को शाश्वतिक रोगी बना देते हैं,तद्यथा-

कट्वम्ललवणात्युष्ण तीक्ष्णरुक्ष विदाहिन:।

आहारा राजसस्येष्टा दु:खशोकामयप्रदा।। गीता.१७-९

अब पुन: तीसरे कोटि के,निम्न श्रेणी के मनुष्यों का प्रतिदिन का आहार बताते हुये कहते हैं कि तामसवृत्ति वाले मनुष्य अधपका,रसहीन,दुर्गन्धयुक्तबासी रखा हुआ भोजन,जूठा,अपवित्र या जो सही से साफ न किया गया हो-तद्यथा

यातायमं गतरसं पूति पर्युषितं च यत्।

उच्छिष्टमपि चामेध्यं भोजनं तामसप्रियम।। गीता.१७-१०

यही कारण है कि अति प्राचीन काल से हमारे यहां यथा अन्न तथा मन की कहावत प्रसिद्ध है।यही कारण था कि लोग शतायु हुआ करते थे,आरोग्यसंपन्न थे। लेकिन आज परिवेश परिवर्तित होता जा रहा है,सबकी खान-पान की आदतें अनियंत्रित व अवैज्ञानिक होती जा रही है,फलत:कोरोना आदि की विभीषिका का दंश झेलना ही पड़ता है। भारतीय परिदृष्य में बेहतर यह रहा कि वही लोग इसके शिकार हो रहे हैं जो अत्याधुनिक सुविधाओं से युक्त,अति आरामदायक व तनाव से युक्त जीवन जी रहे हैं। सुविधायें होना कोई बुरी चीज नहीं है,शर्त मात्र इतनी है कि वह न्यायसंगत तरीके से अर्जित हो,सदाचार पर आश्रित हो,परन्तु दुर्भाग्य यह है कि अपवादों को छोडकर,यह संभव ही नहीं है,क्योंकि इनका कोई आद्यन्त ही नहीं है।मनुष्य के लिप्सा,लोभ आदि के बारे में हम कुछ ही नहीं सकते। तभी तो श्रीकृष्ण,काम,क्रोध व लोभ- इन तीन को नाश का जरिया बताते हैं-

त्रिविधं नरकस्येदं द्वारं नाशनमात्मन:।
काम:क्रोधस्तथा लोभस्तस्मादेतत्त्रयं त्यजेत् ।।गीता१६-२१

कोरोना आदि का संकट प्रबलता की ओर तब बढ़ता जाता है,जब हम किसी कार्य को तय समय, निर्धारित मात्रा में संपन्न नहीं कर पाते। फलत: मानसिक उद्वेग या घबराहट की प्राप्ति होने लगती है । यही कारण है कि हम दु:खमग्न हो जाते हैं व हमारा आत्मविश्वास डिगने लगता है ।इन सबसे बचने के लिये श्रीकृष्ण एक उपाय बताते हुए कहते हैं कि जो कार्य के आरम्भ करते समय जहर के सदृश प्रतीत होता है,किन्तु उस कार्य को जब हम सफलता के साथ संपन्न कर लेते हैं तब वह अमृतवत् हो जाता है ,तभी हमें सच्चा सुख प्राप्त हो जाता है,उसे ही हम सात्त्विक सुख कहते हैं-

यत्तग्रे विषमिव परिणामेऽमृतोपयम् ।
तत्सुखं सात्त्विकं प्रोक्तमात्मबुद्धिप्रसादजम् ।।गीता.१८-३७

वास्तव में उपर्युक्त सुख मीमांसा ही व्यक्ति के स्वस्थ व अस्वस्थ रहने के पीछे का सही कारण है। प्राय: देखने में यह आता है कि जब व्यक्ति का कार्य समय से व बेहतर रूप से पूरा नहीं होता तो वह घबड़ा जाता है फलत:अवसाद ग्रस्त होकर अपने को विकट स्थिति में डाल देता है। अत: इससे बचने के लिये ही हमें पूर्व से योजना बना लेना चाहिये।

कोरोना जैसे व्याधियों से ग्रस्त होने में बहुत अधिक अंशों में व्यक्ति की आसुरी व दैवीय प्रवृत्तियों का भी योगदान होता है।चर्चा क्रम में श्रीकृष्ण ने दैवी प्रवृत्ति वाले मनुष्यों के लक्षणों में तेजस्विता,सहनशीलता,धैर्यवत्ता,स्वच्छता,विद्रोहहीनता व अभिमान रहितता के सद्गुणों की अधिकता व आसुरी प्रवृत्ति वालों में दम्भ,पाखण्ड,अभिमान,क्रोध,कठोरता, व ज्ञानहीनता की अधिकता होती है। गीता.१६/३-४

उपर्युक्त के अतिरिक्त बहुत सी ज्ञानवर्धक बातें कही गई हैं जो व्यक्ति को कोरोना जैसी अन्य घातक बीमारियों से व्यक्ति को सक्षमता,प्रतिरोधक सामर्थ्य प्राप्त करने के लिये मन मजबूती का सिद्धान्त प्रस्तुत करती हैं।यही कारण कि गीता की सार्वकालिक,सार्वजनिन व सार्वदेशिक महत्ता है।

सहायक ग्रंथ-

१- महाभारत गीताप्रेस,गोरखपुर
२- श्रीमद्भगवद्गीता,गीताप्रेस गोरखपुर
३- महाभारत में वर्णित राजधर्म-एक अनुशीलन- डॉ धर्मेन्द्र कुमार

४- श्री कृष्ण नीति -साधना पब्लिकेशन्स

५- शोधपत्रसार- AIOC,2008 कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय,हरियाणा